International Journal of Advanced Research and Development
ISSN: 2455-4030
Impact Factor: RJIF 5.24
www.advancedjournal.com
Volume 2; Issue 5; September 2017; Page No. 905-911

वेदान्त दर्शन : एक सिहांवलोकन

डॉ. दिग्विजय सिहं
सहायक प्रवक्ता, जीव विज्ञान शिक्षण, कुरुक्षेत्र शिक्षण महाविद्यालय, कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र, हरियाणा, भारत।

सांराश
शोधकर्ता ने प्रस्तुत शोध–पत्र में वेद के अन्त (अन्तिम सिद्धान्त या लक्ष्य) वेदान्त को लिया है तथा उसके बारे में विस्तृत चर्चा की है। ब्रह्मा का विवेचन जिस शास्त्र में किया जाता है उसे वेदान्त कहते हैं।
मानव जीवन का अंतिम लक्ष्य ब्रह्म को प्राप्त करना ही है। वेदान्त दर्शन के प्रथम अध्याय में ब्रह्मा की जिज्ञासा, ब्रह्मा जगत की उत्त्पत्ति स्थिति व पालनकर्ता, ब्रह्मा के लक्षणादि का वर्जन किया गया है। द्वितीय अध्याय में ब्रह्मा के स्वरूपादि के विषय विविध शंकाएं तथा उनका समाधान तथा जीवात्मा की गति, इन्द्रियों की रचनादि का वर्णन तृतीय अध्याय में कर्मों के अनुसार जीवात्मा को फल परमात्मा के द्वारा देना तथा परमात्मा की उपासना का वर्णन है। चतुर्थ अध्याय में जीवात्मा के आवागमन (जन्म और मृत्यु को प्राप्त करने) मोक्ष तथा ब्रह्मज्ञान के विविध उपायों का वर्णन है।

मुख्य शब्द : वेदान्त, इन्द्रियों, जीवात्मा के आवागमन, मोक्ष तथा ब्रह्मज्ञान।

प्रस्तावना
वेदान्त दर्शन महर्षि वेदव्यास के काल का है। आचार्य शंकर ने अपने वेदान्त दर्शन के भाष्य में जैन तथा बौद्ध दार्शनिक सिद्धान्तों का खंडन किया है। वेदान्त विषयक साहित्य ने आचार्य गृहदेव, भारुचि, ब्रह्मदत्त, भर्तृहरि, कपर्दी आदि अनेक विद्वानों ने कार्य किया है। वेदान्त दर्शन के भाष्यकारों में आचार्य शंकर का स्थान सर्वोपरि माना जाता है। उन्होंने अपने विचारों के प्रचार–प्रसार के लिए देश के चारों दिशाओं में चारो पीठ की स्थापना की जो शंकराचार्य के मठ के रूप में जाने जाते हैं।
इसके अतिरिक्त रामानुज ने विशिष्टाद्वैतवादका प्रतिपादन किया। निम्बकाचार्य ने वेदान्त परिजात सौरभ नामक भाष्य लिखा। इसके साथ–साथ बल्लभाचार्य शुद्धाद्वैतवाद का प्रतिपादन किया। इन सभी भाष्यों में ब्रह्मा, जीव व माया के बारे में विस्तृत चर्चा देखने को मिलती है। वेदान्त दर्शन ने ब्रह्मा से अतिरिक्त प्रकृति की पृथक सत्ता मानी है और कहा है कि ब्रह्मा जगत का निमित्त कारण है और प्रकृति जगत का उपादान कारण है।

वेदान्त दर्शन
वेदान्त के विविध नाम और अनका तात्पर्यः
वेद के अन्त (अन्तिम सिद्धान्त या लक्ष्य) को वेदान्त कहा जाता है। वेदों के अध्ययन–मनन–श्रवण करने के बाद जो तत्व (ब्रह्म) जाना जाता है, उस (ब्रह्म) का वेवेचन जिस शास्त्र में किया गया है, उसे वेदान्त कहते हैं। वेदों में तृण (घास के तिनके) अर्थात् परमाणु से लेकर ब्रह्म पर्यन्त समस्त पदार्थों का वर्णन है अर्थात् समस्त ज्ञान विज्ञान वेदों में है।[1] सभी विषयों और पदार्थों का ज्ञान प्राप्त करने के बाद ब्रह्म का ज्ञान प्राप्त न किया तो उसका ज्ञान पूर्ण नहीं हुआ, अधूरा ही रहा। इसलिये वेदों का अन्त अर्थात् अन्तिम सिद्धान्त या लक्ष्य 'ब्रह्म' है। ब्रह्म का विवेचन जिस शास्त्र में किया गया है, उसे वेदान्त कहते हैं।

ब्रह्मसूत्रः
वेदान्त दर्शन में ब्रह्म का विवेचन सूत्रों के द्वारा किया गया है। सूत्रों के रूप में यह ग्रन्थ है, इसे 'ब्रह्मसूत्र' भी कहा जाता है। उपनिषदों में ब्रह्म विषयक आध्यात्मिक वर्णन विद्यमान है। मानव जीवन का लक्ष्य ब्रह्म को प्राप्त करना है। ब्रह्म का वर्णन होने के कारण यह वेदों का अन्तिम सिद्धान्त है, इसलिये उपनिषदों को भी कहीं–कहीं 'वेदान्त' कहा गया है। शरीर में रहने वाले आत्मा और परमात्मा का वर्णन होने के कारण इसे शारीरिक सूत्र भी कहते हैं। इस प्रकार
इसके चार राम हैंः–
1. वेदान्त दर्शन
2. ब्रह्मसूत्र
3. उत्तर मीमांसा
4. शारीरिक सूत्र।

पूर्वोत्तर मीमांसा एक शास्त्रः
वेदों के गूढ़ रहस्य वेद की शाखाओं, ब्राह्मण ग्रन्थों आरण्यक और उपनिषदों के द्वारा स्पष्ट किये गये हैं। इसलिए शाखाओं और ब्राह्मण ग्रन्थों को वेदों के प्राचीन भाष्य कहा जाता है। वेद की शाखाओं तथा ब्राह्मण वाक्यों में दृष्टिगोचर होनेवाले विरोध को दूर करके उन वाक्यों को संगति लगाने तथा उनके तात्पर्य को स्पष्ट करने का प्रयास महर्षि जैमिनि ने मिमांसा (पूर्व मीमांसा) में सूत्रों द्वारा किया है। इसी प्रकार उपनिषद् वाक्यों की महर्षि बादरायण ने वेदान्त (उत्तर मीमांसा) में संगति लगाकर स्पष्ट किया है। इसलिये अध्ययन–अध्यापन की परम्परा में प्रचलित है कि मीमांसा शास्त्र पढ़ने से पहले वेद की शाखाओं और ब्राह्मणग्रन्थों का तथा वेदान्त पढ़ने से पहले उपनिषदों का पारायण कर लेना चाहिए। जिससे ये दोनों दर्शन सुगमता पूर्वक समक्ष में आ सके। पूर्व मीमांसा में कर्म (धर्म) की मीमांसा (विवेचना) की गयी है। यह इसके प्रथम सूत्र (अथातो धर्म जिज्ञासा) से स्पष्ट होता है तथा वेदान्त (उत्तर मीमांसा) में ज्ञान (ब्रह्म) की मीमांसा की गयी है। यह इसके प्रथम सूत्र (अथातो ब्रह्म जिज्ञासा) सूत्र से स्पष्ट होता है। ज्ञान के बिना कर्म हो नहीं सकता है तथा बिना कर्म के ज्ञान अधूरा है। ये दोनों (ज्ञान और कर्म) परस्पर एक–दूसरे के पूरक या सहयोगी हैं। इसलिए ज्ञान और कर्म की मीमांसा (विवेचन) करने वाले दोनों

शास्त्र प्राचीन काल में एक ही शास्त्र के नाम से जाने जाते थे। ऐसा प्राचीन ग्रन्थों में लिखा हुआ है। मीमांसा के लिए 'पूर्व मीमांसा' तथा वेदान्त के लिए 'उत्तर मिमांसा' शब्द का प्रयोग होता रहा है। दोनों के लिए एक शब्द 'पूर्वोत्तर मीमांसा' का प्रयोग किया गया है।[2]

प्रपंच हृदय में लिखा है कि मीमांसा के बीस अध्याय हैं। जैमिनि कृत 16 अध्याय (पूर्वमीमांसा) में धर्म (कर्म) का विवेचन किया है।[3] इसलिए इसको वेदान्त दर्शन–ब्रह्मसूत्र–शारीरिक सूत्र तथा उत्तर मीमांसा कहते हैं।

वेदान्त शास्त्र परिचयः

वेदान्त दर्शन जिसे बादरायण सूत्र या उत्तर मीमांसा शास्त्र भी कहा जाता है। इसमें चार अध्याय तथा 555 सूत्र हैं। प्रत्येक अध्याय को चार भागों में विभक्त किया है, जिन्हें 'पाद' कहते हैं, अर्थात् प्रत्येक अध्याय में चार–चार पाद हैं। इस तरह इस शास्त्र में चार अध्याय 16 पाद तथा 555 सूत्र हैं। प्रथम अध्याय में 134 द्वितीय अध्याय में 159, तृतय अध्याय में 176 तथा चतुर्थ अध्याय में 76 सूत्र हैं। वर्तमान प्रकाशित संस्करणों में सूत्र संख्याओं तथा सूत्रपाठ में भिन्नता मिलती है। इस वर्तमान प्रकाशित संस्करणों में सूत्र संख्याओं तथा सूत्रपाठ में भिन्नता मिलती है। इस पुस्तक में सूत्रपाठ आचार्य शंकर द्वारा लिखित पाठ के अनुसार उल्लेख किया गया है। आचार्य शंकर ने अपनी मान्यता (नवीन वेदान्त–अद्वैतवाद) की पुष्टि करने के लिए 'अधिकरण' की कल्पना करके 'अधिकरण देकर अपनी विचारधारा लिखी और उसकी पुष्टि के लिये अधोलिखित सूत्र हैं। तत्पश्चात् सूत्र देकर उनकी व्याख्या लिखी है। जबकि सूत्रकार ने मात्र केवल सूत्र लिखे हैं, अधिकरण का उल्लेख सूत्रकार ने नही किया है। शंकराचार्य के अनुवर्ती अन्य आचार्यों ने भी अधिकरणों का प्रयोग अपने भाष्य में किया है।

वेदान्त दर्शन के प्रथम अध्याय में ब्रह्म की जिज्ञासा, ब्रह्म जगत की उत्पत्ति–स्थिति और पालन कर्ता, ब्रह्म के लक्षणादि का वर्णन किया गया है। द्वितीय अध्याय में ब्रह्म के स्वरूपादि के विषय विविध शंकाएं तथा उनका समाधान तथा जीवात्मा की गति, इन्द्रियों की रचनादि का वर्णन तृतीय अध्याय में कर्मों के अनुसार जीवात्मा को फल परमात्मा के द्वारा देना तथा परमात्मा की उपासना का वर्णन है। चतुर्थ अध्याय में जीवात्मा के आवागमन (जन्म और मृत्यु), मोक्ष तथा ब्रह्मज्ञान के विविध उपायों का वर्णन है।

वेदान्त का रचयिताः

वेदान्त दर्शन की रचना महर्षि वेदव्यास ने की, इन्ही का दूसरा नाम कृष्णद्वैपायन था। महाभारत के युद्ध से पहले इनका जन्म हो चुका था, इनका रंग (वर्ण) काला था इसलिए इन्हें कृष्ण कहा गया तथा इनका जन्मस्थान द्वीप अययन रहा, इसलिए ये कृष्ण द्वैपायन के नाम से जाने जाते थे। चारों वेदों पर पाण्डित्यपूर्ण अधिकार तथा अनेक शिष्यों को वेदों का अध्ययन कराया था। अतः वेदव्यास के नाम से प्रसिद्ध हुए। वेदव्यास और कृष्ण द्वैपायन के अतिरिक्त इनका बादरायण नाम भी था। यह नाम कार्यक्षेत्र की दृष्टि से है। बदरी प्रदेश जो बदरीनाथ या बदरिकाश्रम के नाम से प्रसिद्ध तीर्थ स्थान है। उस बदरी प्रदेश में रहकर व्यास ने इन सूत्रों की रचना या सूत्रों का अध्यापन किया था। इसलिये शास्त्र रचयिता का नाम बादरायण तथा सूत्रों का नाम बादरायण सूत्र प्रचलित हो गया। वेदान्त दर्शन के अनंक स्थानों पर बादरायण के नाम का उल्लेख मिलता है।[4] जिससे स्पष्ट होता है कि इन सूत्रों का रचयिता बादरायण है। इस प्रकार ज्ञात होता है कि वेदान्त के रचयिता महर्षि वेदव्यास हैं, जिनको कृष्णद्वैपायन तथा बदरायण भी कहा जाता है।

वेदान्त दर्शन का रचनाकालः

वेदान्त दर्शन के रचयिता महर्षि वेदव्यास का जो काल है वही काल वेदान्त दर्शन का है। महाभारत युद्ध के समय महर्षि वेदव्यास थे, महाभारत युद्ध को हुए लगभग पांच हजार वर्ष हो गये। अतः इस शास्त्र का रचनाकाल भी लगभग पांच हजार वर्ष है। आचार्य शंकर ने अपने वेदान्त दर्शन के भाष्य में जैन और बौद्ध दार्शनिक सिद्धान्तों का खण्डन किया है। इससे कुछ लोगों की मान्यता है कि वेदान्त दर्शन का समय जैन और बौद्ध धर्म का प्रादुर्भाव के पश्चात् का है, किन्तु यह मान्यता यथार्थ नहीं है। क्योंकि शंकराचार्य ने अपने प्रबल तर्कों के द्वारा अवैदिक जैन बौद्ध मान्यताओं का खण्डन किया और उसके लिये अपने ग्रन्थों (गीता–उपनिषद् और वेदान्त भाष्य) में उन ग्रन्थों के प्रमाणों को उद्धृत किया या अपनी विचारधारा के अनुसार उन ग्रन्थों की व्याख्या की जबकि मूलग्रन्थ की यह भावना न थी। वेदान्त दर्शन के मूल सूत्रों में कहीं पर भी जैन और बौद्ध दार्शनिक सिद्धान्तों की चर्चा या खण्डन नहीं है।

आचर्य शंकर ने अपने शंकरभाष्य में वेदान्त दर्शन के दो सूत्रों– शब्द इति चेन्नातः प्रभवात् प्रत्यक्षानुमानाभ्याम् तथा एव आत्मनः शरीरे भावात्। की व्याख्या करते हुए आचार्य उपवर्ष का उल्लेख किया है।

आचार्य उपवर्ष महर्षि पाणिनि के गुरु 'वर्ष' के भाई थे। उपवर्ष ने पूर्वमीमांसा और वेदान्त सूत्रों पर व्याख्या लिखी थी। उपवर्ष का काल आधुनिक विद्वानों ने भी पाणिनि के समकालीन माना है तथा पाणिनि का काल महाभारत युद्ध के तीन सौ वर्ष के बाद का है। ऐसा अनेक तर्क और प्रमाणो के द्वारा महामहोपाध्याय पं. युधिष्ठर जी मीमांसक ने सिद्ध किया है। आचार्य शंकर के द्वारा उपवर्ष का उल्लेख करने से भी स्पष्ट होता है कि वेदान्त सूत्रों का व्याख्याकार उपवर्ष महाभारत के तीन सौ वर्ष के बाद हुए तथा उन्होंने ब्रह्मसूत्र के भाष्यकार बोधायन के भाष्य पर बोधायन वृत्ति लिखी, ऐसा प्रपंच हृदय में स्पष्ट लिखा है।[5] इससे स्पष्ट होता है कि उपवर्ष से पहले बोधायन हुए जिन्होंने वेदान्त का भाष्य किया और बोधायन से पहले वेदान्त शास्त्र की रचना हुई। इन सब प्रमाणों से स्पष्ट होता है कि वेदान्त दर्शन का रचना काल पांच हजार वर्ष पूर्व का है।

वेदान्त के भाष्यकारः

वेदान्त दर्शन पर अनेक विद्वानों ने भाष्य किया है, जिनमें से कई भाष्यकारों के भाष्य इस समय उपलब्ध नहीं हैं, किन्तु उनके भाष्य या व्याख्या का उल्लेख अर्वाचीन भाषकारों ने किया है जिससे ज्ञात होता है कि उन्होंने वेदान्त सूत्रों की व्याख्या की थी। इसका विस्तृत विवेचन आचार्य उदयवीरजी शास्त्री ने 'वेदान्त दर्शन का इतिहास' नामक ग्रन्थ में किया है। कतिपय भाष्यकारों का विवरण अधोलिखित है।

1. **आचार्य बोधायनः** आचार्य बोधायन ने ब्रह्मसूत्रों पर विस्तृत व्याख्या लिखी थी जो 'कृतकोटि' नाम से जानी जाती थी। ऐसा रामानुजाचार्य ने अपने वेदान्त दशैन के भाष्य में लिखा है।[6] आचार्य बोधायन ने वेदान्त की ही नहीं अपितु मीमांसा की भी व्याख्या लिखी थी ऐसा प्रपंच हृदय नामक ग्रन्थ में उल्लेख है।[7] आचार्य बोधायन ने गृह्यसूत्र, श्रौतसूत्र तथा धर्मसूत्रादि की भी रचना की थी, इनके नाम से सूत्र ग्रन्थ मिलते हैं। बोधायन की विस्तृत व्याख्या का संक्षेप 'उपवर्ष' ने किया, ऐसा प्रपंच में लिखा है। उपवर्ष पाणिनि के गुरु 'वर्ष' का भाई था अतः

बोधायन का समय बहुत प्राचीन है, यह रामानुज तथा प्रपंचहृदय के लेखक तथा उपवर्ष से भी पहले हुआ है।

2. **आचार्य उपवर्षः** आचार्य उपवर्ष ने बोधायन के ब्रह्मसूत्र की विस्तृत व्याख्या 'कृतकोटि' को संक्षेप करके व्याख्या की है, ऐसा 'प्रपंचहृदय' नामक ग्रन्थ से स्पष्ट होता है। इससे यह भी ज्ञात होता है कि उपवर्ष का समय बोधायन के बाद का है। यह पाणिनि के गुरु वर्ष के भाई थे। अतः इनका समय वर्ष के समकालीन अर्थात महाभारत युद्ध के लगभग तीन सौ वर्ष के बाद का है। बुद्ध के प्रादुर्भाव से पहले उपवर्ष हुए हैं। मीमांसा दर्शन के शाबरभाष्य (1–1–5) में भी उपवर्ष का उल्लेख है, ब्रह्मसूत्र के भाष्य में आचार्य शंकर ने उपवर्ष के नाम का उल्लेख किया है। इससे ज्ञात होता है कि शबर स्वामी और आचार्य शंकर, रामानुज आदि से प्राचीन समय उपवर्ष का है। बोधायन और उपवर्ष के अतिरिक्त अन्य आचार्य भी हुए हैं, जिन्होंने वेदान्त दर्शन का भाष्य किया है। जो शंकराचार्य से पहले हुए हैं, जिनके नाम वेदान्त विषयक साहित्य में मिलते हैं, जो इस प्रकार से हैं।
   1. आचार्य गुहदेव
   2. आचार्य भारुचि
   3. आचार्य ब्रह्मानन्दी
   4. आचार्य भार्तृमित्र
   5. आचार्य भार्तृप्रपपन्च
   6. आचार्य द्रमिल
   7. आचार्य ब्रह्मदत्त
   8. आचार्य सुन्दर पाण्ड्य
   9. आचार्य भर्तृहरि
   10. आचार्य कपर्दी।

   आदि अनेक आचार्यों ने अपनी वाणी और लेखनी के द्वारा वेदान्त सूत्रों की व्याख्या करके वेदान्त दर्शन के ब्रह्मविषयक ज्ञान को जन–जन तक पहुँचाने का श्लाघनीय कार्य किया है। आचार्य इसी परम्परा में आचार्य शंकर का प्रादुर्भाव हुआ, जिन्होंने वेदान्त की यशस्विता को विश्व विख्यात कर दिया तथा उसे नई विचारधारा की ओर मोड़ दिया, जिससे वेदान्त और शंकर दोनों एक–दूसरे के पर्यायवाचक बन गये। वेदान्त को बोलते ही ओर सहसा शंकर का स्मरण हो जाता है और शंकर को बोलते ही वेदान्त की ओर सहसा ध्यान आकृष्ट हो जाता है।
3. **आचार्य शंकरः**– वेदान्त दर्शन के भाष्यकारों में आचार्य शंकर का स्थान सर्वोपरि माना जाता है। इन्होंने अपने विचारों के प्रचार–प्रसार के लिए देश के चारों दिशाओं में चार पीठों की स्थापना की जो शंकराचार्य मठ के नाम से जाने जाते हैं। इन मठों पर आसीन होने वाले विद्वान को भी शंकराचार्य के नाम से ही संबोधित किया जाता है।

शंकराचार्य का जन्म पाश्चात्य विद्वान और उनका अनुसरण करने वाले भारतीय विद्वान– ईसा की आठवीं शताब्दी मानते हैं, किन्तु शंकराचार्य द्वारा स्थापित धार्मिक पीठ अर्थात मठों (कांची–कामकोटि पीठ, ज्योतिर्मठ, शारदापीठ, श्रृंगेरी मठ) के आचार्यों की पम्परा, बौद्ध दार्शनिक विद्वानों एवं भारतीय इतिहास की परम्परा तथा शंकराचार्य के जीवन चरित्र विषयक साहित्य (शंकरदिग्विजय) आदि में स्पष्ट होता है कि शंकराचार्य का जन्म ईसा से 501 वर्ष पूर्व हुआ था। इस विषय में आचार्य उदयवीरजी शास्त्री ने अपने ग्रन्थ 'वेदान्त दर्शन का इतिहास' में विस्तार से प्रकाश डाला है। आचार्य शंकर लगभग 32 वर्ष जीवित रहे। 16 वर्ष की आयु में आपने वेदान्त दर्शन का भाष्य किया जो 'शंकराभाष्य' के नाम से प्रसिद्ध है। आपके भाष्य की शैली हृदय ग्राही है। आपकी भाषा अपने मन्तव्य को स्पष्ट करने में इतनी सशक्त एवं समर्थ है कि जिसे पढ़कर विद्वत् समुदाय आपके प्रति नतमस्तक हो जाता है। आपने वेदान्त दर्शन के अतिरिक्त गीता और उपनिषदों का भी भाष्य किया है। आपके तीनों ग्रन्थों (वेदान्त–उपनिषद्–गीता) पर किये हुए भाष्य 'प्रस्थानत्रयी' के नाम से प्रसिद्ध है। बत्तीस वर्ष के स्वल्प जीवनकाल में आपने शास्त्रों का अध्ययन करके उनकी व्याख्या अपने सिद्धान्त (अद्वैतवाद) के अनुसार करना तथा उसके प्रचार प्रसार के लिये यात्रा करना, विरोधी मतवालों से शास्त्रार्थ में चार धार्मिक पीठ (मठों) की स्थापना करने का महत्वपूर्ण कार्य किया है। इनके गुरू का नाम गोविन्द पाद और उनके गुरू का नाम आचार्य गौड़पाद था। गौड़पादाचार्य ने माण्डूक्योपनिषद् पर माण्डूक्योपनिषद् कारिका नामक 12 श्लोकों की लघु पुस्तिका लिखी है–

आचार्य शंकर का मतः

वेदान्त दर्शन का पठन–पाठन करने वालों में आचार्य शंकर का मत 'अद्वैतवाद' के नाम से जाना जाता है। चार्वाक–जैन और बौद्ध दर्शन के विद्वानों द्वारा जब यह प्रचारित किया जा रहा था कि ब्रह्म (परमात्मा) नाम की कोई सत्ता नहीं है, सब कुछ जड़ जगत् अर्थात यह दिखनेवाला संसार या शरीर ही है। बौद्धों के शून्यवाद तथा जैनियों के तीर्थकरवाद ने तथा चार्वाक के जड़वाद ने ब्रह्म की सत्ता को सर्वथा नकार दिया था, जब ब्रह्म नहीं तो उसका ज्ञान वेद भी नहीं और वेद नहीं तो वेदोपदिष्ट वर्णाश्रम धर्म, पंचमहायज्ञ, 16 संस्कारादि कुछ भी नहीं, सारा भारतीय समाज वैदिक व्यवस्थाओं से छिन्न–भिन्न हो रहा था।

स्वप्न के समान जगत्ः

ऐसे विकराल समय में शंकर का प्रादुर्भाव हुआ और उन्होंने उद्घोष किया कि सब कुछ ब्रह्म ही है।[8] ब्रह्म के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है। यह दिखने वाला संसार और चेतन प्राणियों का शरीर कुछ नहीं, यह सब झूठा और मिथ्या है।[9] यदि यह जड़ जगत् और शरीर कुछ नहीं है तो यह जो स्पष्ट दिख रहा है, इस दिखनेवाले पदार्थ की सत्ता को कैसे मना कर सकते हैं? जो प्रत्यक्ष है, ऐसा जब शंकराचार्य को पूछा जाता है तब उनका उत्तर होता है कि जैसे स्वप्न में व्यक्ति किसी को देखता है या लड्डू खाता है या किसी से लड़ाई–झगड़ा करता है किन्तु आंख खुलने पर न तो कोई व्यक्ति है, न कोई लड्डू है (जिसे वह खा रहा हो) और न कोई व्यक्ति खड़ा हुआ है, जिससे वह स्वप्न में लड़ाई लड़ रहा था। जैसे स्वप्न में देखी हुई वस्तु यथार्थ में नहीं होती है, वैसे ही जगत में प्रत्यक्ष दिखनेवाले पदार्थ भी नहीं हैं, वे सब मिथ्या है, झूठे हैं।[10] यह संसार मिथ्या और झूठा है, यह तत्वज्ञान आंख खुलने (तत्वज्ञान होने) पर होता है कि यह संसार स्वप्न के समान मिथ्या है।

परिणाम और विवर्तः

यदि केवल एक ही ब्रह्म है तो हम सब पृथक्–पृथक् अपना अस्तित्व क्यों अनुभव करते हैं, इसका क्या कारण है। आचार्य शंकर उत्तर देते हैं कि अविद्या के कारण यह अलग–अलग बोध होता है। जब तत्वज्ञान हो जायेगा तब यह अनुभूति होगी कि मैं ब्रह्म हूँ।[11] यदि ब्रह्म ही चेतना तत्व है तो उससे जड़ जगत कैसे बन गया। इसका उत्तर दिया जाता है कि जड़ जगत चेतन ब्रह्म का परिणाम नहीं है। जैसे दूध का परिणाम दही होता है। दही में दूध के गुण रहते हैं, किन्तु जगत ब्रक्त का परिणाम नहीं अपितु विवर्त है। विवर्त का अर्थ समझाते हुए कहते हैं कि जैसे अंधेरे में टेढ़ी–मेढ़ी पड़ी हुई

रस्सी सांप नहीं होती, किन्तु अंधेरे के कारण व्यक्ति उसे सांप समझकर डरता है। अंधेरे में रस्सी को सांप समझना 'विवर्त' है, जैसे रस्सी का परिणाम सांप नहीं है, वैसे ही जगत ब्रह्म का परिणाम नहीं है अपितु विवर्त है, यथार्थ में ब्रह्म से जगत नहीं बनता है। इसलिए ब्रह्म के गुण जड़ जगत में नहीं है। इस प्रकार चार्वाक– जैन बौद्धादि मतों को पराजित करने के लिये आचार्य शंकर ने केवल मात्र ब्रह्म को सिद्ध करने के लिये विविध शब्दों की रचना की और अद्वैतवाद को सिद्ध करने का यत्न किया, जबकि यथार्थ में ऐसा नहीं है।

चेतन से जड़ और विवर्तः

अद्वैतवाद को सिद्ध करने के लिये आचार्य शंकर ने अनेक स्वतकल्पित शब्दों का आश्रय लिया। चार्वाक दर्शन ने जड़ से चेतन की उत्पत्ति सिद्ध करने का यत्न किया कि पृथ्वी–जल–अग्रि वायु आदि जड़ पदार्थों के परमाणुओं के संयोग से प्राणियों के शरीर में चेतनता आ जाती है। जीवन प्रकट हो जाता है, चेतन तत्व (आत्मा) शरीर के अतिरिक्त कुछ नहीं है। परिस्थिवश चेतनता आ जाती है और परिस्थितवश चेतनता समाप्त हो जाती है, इसे ही जन्म और मृत्यु कहा जाता है। ठीक इसके विपरीत आचार्य शंकर ने सिद्ध किया है कि चेतन ब्रह्म से ही जड़ जगत बनता है। यदि ब्रह्म से जड़ जगत बना है तो ब्रह्म के गुण (आनन्द, चेतन, सर्वज्ञादि) जड़ जग में क्यों नहीं दिखते है, जब यह आचार्य शंकर से पूछा जाता है तो उत्तर दिया जाता है कि जड़ जगत ब्रह्म का परिणाम नहीं अपितु विवर्त है। इस विवर्त शब्द की परिकल्पना से ब्रह्म से जगत की उत्पत्ति सिद्ध की जबकि यथार्थ में विवर्त शब्द वेदान्त सूत्र में कहीं पर भी इस अर्थ में प्रयुक्त नहीं हुआ है।

एक से अनेकः

अद्वैतवाद मेंएक मात्र केवल ब्रह्म ही है– तो हम सब अनेक कयों दिखते हैं तो इसका उत्तर दिया जाता है कि एक ब्रह्म होने पर भी अलग–अलग जीव माया के कारण दिखते हैं। माया क्या है? गुण है या द्रव्य है, यदि गुण है तो गुण किसका है, यदि माया ब्रह्म का गुण माना जाय तो यही कहा जायेगा कि सूर्य में अन्धेरा है (जो कि कभी हो नहीं सकता) क्योंकि माया के कारण सर्वज्ञ और आनन्द स्वरूप ब्रह्म अपने आपको अज्ञानी और दुःखी जीवात्मा मान बैठता है। यदि माया को द्रव्य माने तो तत्व एक नहीं दो अर्थात ब्रह्म और माया हो जायेंगे। तब अद्वैतवाद कैसे कहेंगे? इस उलझन से बचने के लिए कहा जाता है, कि माया अनिर्वचनीय है अर्थात् इसकी हम कुछ भी व्याख्या नहीं कर सकते हैं, कितना आश्चर्य है कि जिस माया का आश्रय लेकर अद्वैतवाद को सिद्ध किया जाता है, फिर भी माया के विषय में कहते हैं कि इसकी व्याख्या हमारे द्वारा नहीं की जा सकती है।

माया का कार्यः–

माया क्या है? इसको समझाते हुए कहा जाता है कि माया के दो कार्य है एक आवरण और दूसरा विक्षेप, जैसे जादूगर जादू दिखाता है कि वह मिट्टी से पैसा बना देता है और दर्शक उसे देखकर आश्चर्यचकित हो जाते हैं, मिट्टी को छिपाना यह आवरण है और मिट्टी के स्थान पर पैसा दिखाया जाता है तथा विक्षेप गुण के कारण ब्रह्म के स्थान पर जड़ जगत दिखने लगता है। इस लौकिक दृष्टान्त में जादूगर अलग हैं और जादू देखनेवाले साधारण व्यक्ति अलग हैं जो जादू को नहीं जानते हैं किन्तु 'अद्वैतवाद' को सिद्ध करने में तो जादूगर भी वही ब्रह्म है और जादू देखकर भ्रमित होनेवाला भी वही ब्रह्म। इस प्रकार वियित्र उदाहरणों के द्वारा 'अद्वैतवाद' का भवन खड़ा किया गया।

अभिन्न निमित्तोपादान कारणः

अद्वैतवाद को सिद्ध करने के लिए मकड़ी का उदाहरण दिया जाता है कि जैसे मकड़ी के अन्दर से जाला निकलता है और मकड़ी उस जाले में फंस जाती है ठीक इसी प्रकार ब्रह्म से ही जगत् बनाकर और उसी में फंसा हुआ है अर्थात ब्रह्म ही जगत का निमित्त कारण और उपादान कारण है जिसे 'अभिन्न निमित्तोपादान कारण' कहा जाता है। किन्तु इस उदाहरण से भी अद्वैत सिद्ध नहीं होता है क्योंकि मकड़ी के शरीर, जीवात्मा जाला बनानेवाला (अर्थात निमित्त कारण) है और मकड़ी का शरीर, जाले का उपादान कारण है। यदि केवल मकड़ी का शरीर हो और आत्मा न हो तब जाला नहीं बन सकता है तथा केवल आत्मा हो और मकड़ी का शरीर न हो तब भी जाला नहीं बन सकता है। जगत् बनने के लिए दोनों का अर्थात निमित्त कारण ब्रह्म तथा उपादान कारण प्रक ृति का होना आवश्यक है। इस तरह मकड़ी के उदाहरण से भी अद्वैत सिद्ध नहीं होता है।

तीन सत्ताः

इसी प्रकार अद्वैत (नवीन वेदान्त) के सिद्धान्त के द्वारा पारमार्थिक सत्ता (ब्रह्म), प्रातिभासिक सत्ता (रस्सी को सांप समझना) तथा व्यावहारिक सत्ता (लोक व्यवहार) के द्वारा भी जगत के मिथ्यात्व को सिद्ध करने का यत्न किया जाता है। किन्तु यह उदाहरण भी अद्वैतवाद को सिद्ध नहीं कर पाता है क्योंकि यदि कहीं पर भी किसी ने यथार्थ रूप में सांप नहीं देखा तो रस्सी में भी सांप का भ्रम नहीं हो सकता है। रस्सी में सांप का भ्रम होना ही प्रमाणित करता है कि, यथार्थ में जैसे सांप की सत्ता है वैसे ही यथार्थ में जगत् की सत्ता भी है, जगत् मिथ्या–झूठा या स्वप्नवत् नहीं है।

आदि और अन्तः

जो पदार्थ आदि में नही है और अन्त (प्रलय) में नहीं है वह मध्य में भी नहीं होता है। जगत बनने से पहले नहीं था, प्रलय में भी नहीं रहेगा, इसलिए वर्तमान में भी नही है। इस युक्ति के द्वारा भी अद्वैत को सिद्ध करने का यत्न किया जाता है, किन्तु यह भी एक कल्पना मात्र है। यथार्थ नहीं है, जैसे कोई सभा में भाषण देता हुआ कहे कि मैं भाषण देने से पहले नहीं था, भाषण देने के बाद भी नहीं रहूँगा अर्थात चला जाऊंगा। इसलिये भाषण देते समय भी मैं नहीं हूँ तो कोई भी व्यक्ति ऐसा नहीं मानेगा क्योंकि मनुष्य का सारा व्यवहार अपने अस्तित्व को मानकर ही चल रहा है, इसलिए जगत को मिथ्या सिद्ध नहीं किया जा सकता है।

आचार्य रामानुजः

आचार्य रामानुज ने ब्रह्मसूत्रों का भाष्य किया जो 'श्रीभाष्य' के नाम से जाना जाता है। इनकार समय आधुनिक विद्वानों के अनुसार (सन्1037 से 1137) ईसा की 12वीं शताब्दी माना जाता है। इन्होंने 'श्रीभाष्य' के अतिरिक्त वेदान्त संग्रह, वेदान्त सार, वेदान्त दीप आदि ग्रन्थ भी लिखे हैं। इनकी मान्यता शंकराचार्य के अद्वैतवाद से भिन्न रही है जो विशिष्टद्वैतवाद के नाम से जानी जाती है अर्थात प्रकृति और जीव ईश्वर के ही अंश हैं। जीव–चित् है और उसे ब्रह्म कहते हैं। चित् अचित् विशिष्ट होने के कारण 'विशिष्टाद्वैतवाद' के नाम से इनकी विचारधारा जानी जाती है। प्रकृति और जीव ईश्वर के ही अंश होने से उससे पृथक नहीं किये जा सकते हैं, इसलिये इसे

'विशिष्टाद्वैतवाद' कहा जाता है। इन्होंने आचार्य शंकर के अद्वैतवाद का अपने श्रीभाष्य में खण्डन किया है।

आनन्दतीर्थ अथवा मध्वाचार्यः

आनन्दतीर्थ का प्रसिद्ध नाम आचार्य मध्व है। इनका जन्म दक्षिण भारत में 'उडुपी' नामक स्थान में सन् 1199 में हुआ तथा देहान्त सन् 1303 में हुआ। इन्होंने ब्रह्मसूत्रों पर भाष्य करके अद्वैतवाद का खण्डन करते हुए अपने भाष्य में 'द्वैतवाद' के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। ब्रह्मसूत्रों के अतिरिक्त गीता तथा छान्दोग्य, बृहदारण्यक, केन–कठादि उपनिषदों का भी भाष्य किया है। ब्रह्म से जीव भिन्न है, मुक्तावस्था में भी जीव ब्रह्म से अलग रहता है। जीव और ब्रह्म दोनों की सत्ता है इसलिये इसके सिद्धान्त को द्वैतवाद के नाम से जाना जाता है।

निम्बाकचार्यः

इनके काल के विषय में निश्चितता नहीं है। इनके विषय में लोकोक्ति प्रचलित है कि इनका वास्तविक नाम नियमानन्द था। उन्होंने अपने शिश्यों को रात्री में नीम के पेड़ पर चढ़कर सूर्य के दर्शन कराये थे, इसलिये इनका नाम निम्बार्क प्रसिद्ध हो गया। इन्होंने वेदान्त पर भाष्य किया है जो 'वेदान्त पारिजात सौरभ' के नाम से जाना जाता है। इन्होंने मध्वाचार्य के द्वैतवाद का खण्डन करके 'भेदाभेद' विचारधारा को प्रस्तुत किया। अर्थात जीव चिद्रूप ब्रह्म से अभिन्न तथा चिद अंश के रूप में जीव ब्रह्म से भिन्न है, इसलिये इसे 'भेदाभेद' कहा जाता है।

वल्लभाचार्यः

वल्लभाचार्य का जन्म काल ईसा की 15वीं शताब्दी में माना जाता है। इन्होंने वेदान्त दर्शन पर भाष्य किया जो अणुभष्य के नाम से प्रसिद्ध है। इनका सिद्धान्त 'शुद्धाद्वैतवाद' के नाम से प्रसिद्ध है। जिसमें इन्होंने स्पष्ट किया है कि ब्रह्म माया से सदा अलिप्त रहता है, अद्वैतवाद है, इसलिये इनके सिद्धान्त का नाम 'शुद्धाद्वैत' पड़ा। इन्हेांने वेदान्त दर्शन के अतिरिक्त पूर्व मीमांसा तथा भागवत पर भी टीका लिखी है। वल्लभाचार्य के मत को 'पुष्टिमार्ग' के नाम से जाना जाता है।

इन आचार्यों अतिरिक्त आचार्य भास्कर ने (सन् 1000ई.) भेदाभेद परक भास्कर भाष्य, श्रीकण्ठ (सन् 1270) ने 'शैवभाष्य' श्रीपति (सन् 1400) ने 'श्रीकरभाष्य' तथा विज्ञान भिक्षु (सन् 1600) ने 'विज्ञानामृतभाष्य' तथा आचार्य बलदेव (सन् 1725) ने 'गोविन्दभाष्य' नाम से वेदान्त दर्शन के भाष्य किये है।

वेदान्त विषयक साहित्यः 'वेदान्तकल्पतरु' तेरहवी शताब्दी में श्री अमलानन्द ने लिखा। अठारवी शताब्दी में श्री वैद्यनाथ पायगुंडे ने 'वेदान्तकल्पतरु मंजरी' लिखी। श्री आवार्य निम्बार्काचार्य के शिष्य श्री निवासाचार्य ने ब्रह्मसूत्रों की व्याख्या वेदान्त कौस्तुभ नाम से लिखी। वेदान्त दीप नाम से ब्रह्मसूत्रों की विस्तृत व्याख्या आचार्य रामानुज ने लिखी। 'वेदान्त परिभाषा' में नवीन वेदान्तविषयक मान्यताओं का विवेचन किया गया है इसके लेखक श्री धर्मराजध्वरीन्द्र है। 'वेदान्तपरिजात सौरभ' श्री निम्बार्काचार्य की वेदान्त सूत्रों की स्वल्प व्याख्या है। इसमें इन्होंने अपने मत (द्वैताद्वैत) का प्रतिपादन किया है और अन्य के मत का खण्डन नहीं किया है। 'वेदान्तरत्न मंजुषा' इसमें आचार्य निम्बार्क रचित दशश्लोकी नामक ग्रन्थ की व्याख्या की गयी है। इसके रचयिता श्री पुरुषोत्तम है। वेदान्त विद्वद्गोष्ठी 'नवीन वेदान्त' (अद्वैतवाद) विषयक ग्यारह विद्यानों के लेख हैं जिसके सम्पादक सच्चिदानन्द सरस्वती है ये निबन्ध सन् 1162 में होल्डे नरसिपरु (कर्नाटक) से प्रकाशित हुए हैं। 'वेदान्त शतकम्', 'वेदान्त सार', 'वेदान्त सिद्धान्त मुक्तावली' 'वेदान्त–सिद्धान्तसूक्ति मंजरी', वेदान्त संग्रह आदि अनेक छोटे बड़े ग्रन्थ नवीन वेदान्त विषयक प्रकाशित हुए है।

आर्यविद्वान्ः

ऋषि दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश में वेदान्त दर्शन के बोधायन भाष्य को पढ़ने का उल्लेख किया है। आचार्य रामानुज ने अपने भाष्य में वेदान्तदर्शन के भाष्यकार बोधायन का उल्लेख किया है जिससे ज्ञात होता है कि बोधायन का वेदान्त दर्शन पर भाष्य रहा है जो इस समय उपलब्ध नहीं है।

ऋषि दयानन्द ने किसी भी दर्शन का भाष्य नहीं किया है किन्तु अपने ग्रन्थों में विविध प्रसंगों में अन्यत्र शात्रों के सूत्रों का भी उल्लेख किया है। अद्वैतवाद की समीक्षा सत्यार्थप्रकाश के सप्तम–नवम–एकादशादिसमुल्लासों में करते हुए तत्सम्बन्धी सूत्रों की स्पष्ट व्याख्या की है। ऋषि दयानन्द का अनुसरण करने वाले आर्यजगत् के प्रसिद्ध विद्वान् महामहोपाध्याय पं. आर्य मुनिजी ने वेदान्त दर्शन का विस्तृत भाष्य किया। अपने भाष्य में ब्रह्मसूत्रों के तात्पर्य के विपरीत की गयी साम्पद्रायिक व्याख्याओं की समीक्षा भी की है। इस भाष्य का प्रकाशन सन् 1103 में लाहौर में हुआ था। इसका दूसरा संस्करण हरियाणा साहित्य संस्था गुरुकुल झज्जर (हरि.) से हुआ। इसका अंग्रेजी अनुवाद रांची निवासी श्रीबालकृष्णजी सहाय ने किया। पं. मणिशंकरजी ने गुजराती भाषा में अनुवाद किया। पं. राजारामजी शात्री, पं. तुलसीदास स्वामी (मेरठ) ने इसका भाष्य किया। स्वामी ब्रह्ममुनि ने संस्कृत में भाष्य किया। पं. गोपदेवजी ने 'तेलगु भाषा' में इसकी व्याख्या लिखी। दर्शन शात्रों का गम्भीर अध्ययन और आलोडन करने वाले आचार्य उदयवीर जी शात्री ने वेदान्त दर्शन का विद्वत्तापूर्ण भाष्य किया जो 'विद्योदय भाष्य' के नाम से जाना जाता है। आपने अपने भाष्य में वेद एवं वेदान्त विरोधी व्याख्याओं की तर्क एवं प्रमाण सहित समीक्षा करके ब्रह्मसूत्रों की यथार्थता को स्पष्ट करने का श्लाघनीय प्रयास किया है। वेदान्त दर्शन और आचार्य शंकर की प्राचीनता को प्रमाणित करने के लिये 'वेदान्त दर्शन का इतिहास' नामक ग्रन्थ लिखा। स्वामी जगदीश्वरानन्दजी ने ब्रह्मसूत्रों का सरल हिन्दी भाषा में अनुवाद किया। वेदान्त सूत्रों के आधार पर ही स्वामी विद्यानन्द जी सरस्वती ने अनादि तत्त्व मीमांसा तथा तत्त्वमसि आदि पुस्तकें लिखकर वेदान्तदर्शन की मान्यताओं के प्रचार प्रसार में योगदान दिया है।

ब्रह्मसूत्रों का तात्पर्यः

ब्रह्मसूत्रों की व्याख्या करते हुए व्याख्याकारों ने अपने समप्रदाय के मन्तव्य के अनुसार सूत्रों की व्याख्या की, किसी ने अद्वैत, तो किसी ने विशिष्टाद्वैत तो किसी ने द्वैताद्वैतवाद को सिद्ध करने का यत्न किया। वेदान्तशात्र के रचयिता का क्या तात्पर्य रहा है इसको विभिन्न वादों में न ले जाकर सूत्र के शब्दार्थ से ही जानने का प्रयत्न किया जाये तो शात्र रचयिता की मान्यताओं को समझने में सफल हो सकते हैं। वेदान्त दर्शन के प्रथम सूत्र द्वारा स्पष्ट किया गया है कि अब हम ब्रह्म की जिज्ञासा की इच्छा करते हैं।[12] इस प्रथम सूत्र से ही स्पष्ट होता है कि ब्रह्म पृथक् है और इसको जानने की इच्छा करने वाला जिज्ञासु (जीवात्मा) पृथक् है। व्यक्ति स्वयं अपने कन्धों पर नहीं चढ़ता है ठीक इसी प्रकार ब्रह्म ही ब्रह्म को जानने की इच्छा नहीं करता है अर्थात् ब्रह्म और जीव पृथक्–पृथक् हैं।

ब्रह्म और जीव में भिन्नताः

ब्रह्म (परमात्मा) आनन्द स्वरूप है इसका वेदान्त दर्शन प्रथम अध्याय के प्रथम पाद के सूत्र 12 से 19 तक न आठ सूत्रों में विवेचन किया हे। तैत्तिरीय उपनिषद् में जीवात्मा के अन्नमय–प्राणमय–मनोमय–विज्ञानमय और आनन्दमय इन पांच कोशों का वर्णन किया है तो किसी को यह सन्देह न हो जाये कि जैसे परमात्मा आनन्द स्वरूप है वैसे ही जीवात्मा भी ब्रह्म के समान आनन्द स्वरूप है अर्थात् दोनों (जीव और ब्रह्म) एक ही पृथक है पृथक् – पृथक् नहीं है। यह सन्देह को दूर करते हुए सूत्रकार को स्पष्ट किया है कि आनन्द (मय) स्वरूप ब्रह्म से जीवात्मा पृथक् है– भिन्न है।[13] क्योंकि दोनों में भेद (भिन्नता) है यह अगले सूत्र में सूत्रकार ने स्पष्ट किया है।[14] उपनिषदों में इस को स्पष्ट करते हुए लिखा है कि ब्रह्म (परमात्मा) आनन्द स्वरूप है जिसको प्राप्त करके जीवात्मा आनन्द का अनुभव करता है। एक आनन्द का अनुभव करता है। एक आनन्द को देने वाला और एक आनन्द को प्राप्त करने वाला है यही ब्रह्म और जीव में भिन्नता है।[15]

सापेक्ष शब्द और विधि निषेधः

सर्वज्ञ और अल्पज्ञ ये दोनों शब्द सापेक्ष हैं। एक दूसरे की अपेक्षा से इनका प्रयोग होता है। यदि अल्पज्ञ–जीवात्मा न हो तो किस की दृष्टि से परमात्मा को सर्वज्ञ कहा जायेगा। अल्प शक्तिमान् जीव न हो तो किसी की दृष्टि से ईश्वर सर्व शक्तिमान् कहलायेगा। श्रोता के विना वक्ता, या योगी के विना चिकित्सक, छात्र के विना शिक्षक का कोई उपयोग नहीं है उसी प्रकार कर्म करने और कर्म का फल भोगनेवाला जीवात्मा न हो तो कर्म फल देने वाले परमात्मा का क्या उपयोग या महत्व है। अर्थात् विना जीव के ब्रह्म की कोई उपयोगिता नहीं अतः सापेक्षवाचक शब्दों से भी स्पष्ट होता है ब्रह्म (ईश्वर) से भिन्न जीवात्मा की सत्ता है। यदि जीवात्मा ने हो तो वेदादि शाòों उपदिष्ट विधि और निषेध वाक्यों का क्या उपयोग होगा? जैसे वेद में उपदेश है कि संसार का प्रत्येक पदार्थ अस्थिर अर्थात् सदा न रहने वाला है जो कल था वह आज नहीं हे और जो आज है वह कल नहीं रहने वाला है इसलिये हे मनुष्य सांसारिक पदार्थों (भोगों) का त्यागपूर्वक भोग कर।[16] खेती कर, जुआ मत खेल[17] इत्यादि उपदेश जीवात्मा के लिये है। यदि जीवात्मा न हो और केवल ब्रह्म ही ब्रह्म हो, तो क्या ब्रह्म स्वयं अपने (ब्रह्म) को उपदेश दे रहा है।

ब्रह्म और प्रकृतिः

अद्वैतवाद के अनुसार ब्रह्म के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है ब्रह्म जगत् का निमित्त कारण है तो जब यह पूछा जाता है कि जगत् का उपादान कारण क्या है जिससे जगत् बना है। (जैसे मिट्टी से घड़ा बनता है इसमें मिट्टी घड़े का उपादान कारण है इस शंका का समाधान करते हुए अद्वैतवाद की ओर से कहा जाता है कि ब्रह्म ही जगत् का उपादान कारण है, ऐसा मानने पर ब्रह्म में विकार आ जायेगा तब ब्रह्म निर्विकार नहीं रहेगा तो इसका समाधान करते हुए अद्वैतवाद की ओर से कहा जाता है कि ब्रह्म की शक्ति माया है, माया का विकार या परिणाम जगत् है। जब उनसे माया के विषय में पूछा जाता है कि माया क्या है? यह ब्रह्म का गुण है या द्रव्य (पृथक् तत्त्व पदार्थ) है तो इसका कोई समुचित उत्तर इन (अद्वैतवाद या नवीन वेदान्त) के पास नहीं है। वह (माया) तो अनिर्वचनीय है अर्थात् उसकी व्याख्या नहीं की जा सकती है यह उत्तर देते हैं। समस्या यह है कि यदि माया को ब्रह्म का गुण माना जाय तो वह ब्रह्म का गुण है क्योंकि ब्रह्म के अतिरिक्त कुछ भी नहीं हे। यदि गुण–गुणी का समवाय सम्बन्ध है तो माया ब्रह्म के साथ सदा रहेगी तो ब्रह्म विकारी हो जायेगा। यदि द्रव्य (पदार्थ) है तो माया ब्रह्म के साथ सदा रहेगी तो ब्रह्म विकारी हो जायेगा। यदि द्रव्य (पदार्थ) है तो फिर एक (अद्वैत) नहीं रहा फिर तो दो (ब्रह्म और माया) हो जायेंगे इत्यादि अनेक शंकाए उपस्थित होती हैं–

वेदान्त दर्शन के रचयिता ने ब्रह्म से अतिरिक्त प्रकृति की पृथक् सत्ता मानी है। ब्रह्म जगत् का निमित्त कारण है और प्रकृति जगत् का उपादान कारण है। उपादान कारण में परिवर्तन होता है जैसे मिट्टी से घड़ा या धागे से कपड़ा बनता है वैसे ही प्रकृति से जगत् बनता है। इस विषय को ब्रह्म सूत्रकार ने अनेक सूत्रों द्वारा स्पष्ट किया है।[18] उपनिषदों में अनेक स्थानों पर दोनों (निमित्त और उपदान) कारण तत्त्वों का विवेचन किया है। ब्रह्म जगत् का निमित्त कारण है तथा प्रकृति जगत् का उपादान कारण है।[19] इसी विषय में सूत्रकार ने स्पष्ट किया है कि परमात्मा अपने संकल्परूपी प्रयत्न से उपादान कारण रूप प्रकृति को प्रेरित करके सृष्टि की रचना करता है।[20] श्वेताश्वतरोपनिषद् में 'माया' शब्द प्रकृति के लिये प्रयुक्त हुआ है।[21] इससे विदित होता है कि ब्रह्म ने माया अर्थात् प्रकृति से जगत् की रचना की है।

निष्कर्षः–

वेदान्त दर्शन महर्षि वेदव्यास के काल का है। आचार्य शंकर ने अपने वेदान्त दर्शन के भाष्य में जैन तथा बौद्ध दार्शनिक सिद्धान्तों का खंडन किया है। वेदान्त विषयक साहित्य ने आचार्य गृहदेव, भारुचि, ब्रह्मदत्त, भर्तृहरि, कपर्दी आदि अनेक विद्वानों ने कार्य किया है। वेदान्त दर्शन के भाष्यकारों में आचार्य शंकर का स्थान सर्वोपरि माना जाता है। उन्होंने अपने विचारों के प्रचार–प्रसार के लिए देश के चारों दिशाओं में चारो पीठ की स्थापना की जो शंकराचार्य के मठ के रूप में जाने जाते हैं।

इसके अतिरिक्त रामानुज ने विशिष्टाद्वैतवादका प्रतिपादन किया। निम्बकाचार्य ने वेदान्त परिजात सौरभ नामक भाष्य लिखा। इसके साथ–साथ बल्लभाचार्य शुद्धाद्वैतवाद का प्रतिपादन किया। इन सभी भाष्यों में ब्रह्मा, जीव व माया के बारे में विस्तृत चर्चा देखने को मिलती है। वेदान्त दर्शन ने ब्रह्मा से अतिरिक्त प्रकृति की पृथक सत्ता मानी है और कहा है कि ब्रह्मा जगत का निमित्त कारण है और प्रकृति जगत का उपादान कारण है।

संदर्भ

1. सर्वज्ञानमयो हि सः ..... (मनु.)
2. वक्ष्यति च कर्म ब्रह्म मीमांसयोरेक शास्त्रत्वम् ...(आचार्य रामानुज रचित श्रीभाष्य वेदान्त 1–1–1)
3. तदिदं विंशत्यध्याय निबद्धम् (मीमांसा शाòम्), तत्र षोडशाध्यायनिबद्धं पूर्व मीमांसा शास्त्रम्.... धर्मविचारपरायणं ... ब्रह्म विचार परायण व्यास कृतम् ... (प्रपंचहृदय –उपांग प्रकारण पृ. 36–36 यु.मी. रचित मीमांसा शाबरभाष्य के शाòावतार प्रकरण पृष्ठ 3)
4. वेदान्त दर्शन के अनेक सूत्रों में बादरायण का नाम मिलता है, वे अधोलिखित है।
   क) अनुस्मृतेर्बादरिः (1–2–30)
   ख) पूर्व तु बादरायणो हेतुर्व्यपदेशात् (3–2–41)
   ग) पुरुषार्थोऽतः शब्दादिति बादरायणः (4–4–1)
   घ) अधिकोपदेशात तु बादरायणस्यैवं दर्शनात् ।। (4–4–8)
5. भगवद् बोधायन कृतां विस्तीर्णा ब्रह्मसूत्र वृत्तिं पूर्वाचार्याः संचिक्षिपुः ... (वेदान्त श्रीभाष्य 1–1–1)
6. सांगोपांगस्य वेदस्य पूर्वोत्तरकाण्ड संभिन्नस्याशेष वाक्यार्थ विचार

परायणं मीमांसा शाòम्। तदिदं विशत्यध्याय निबद्धम्। ... तस्य विंशत्यध्यायनिबद्धस्य मीमांसा शाòस्य कृतकोटिनामधेयं भाग्यंबोधयनेन कृतम्। तद् ग्रन्थ बाहुल्य भयादुपेक्ष्य किञ्चित् संक्षिप्तमुपवर्षेण कृतम्।। (प्रपंचह्रदय उपांग प्रकरण पृ. 39)

7. अथा गौः इत्यत्र कः शब्द ? गकारैकारविसर्जनीयाः इति भगवानुपवर्षः (शाबरभाष्य मीमांसादर्शन 1–1–5)
8. सर्वं खल्विदं ब्रह्म।
9. ब्रह्म सत्यं जगद् मिथ्या जीवो ब्रह्मैव नापरः ।।
10. जागृद भावानां हश्यानां वैतथ्यं तथा जागरितेऽपि ....
11. अहं ब्रह्मास्मि
12. अथातो ब्रह्मजिज्ञासा (वेदान्त 1–1–1)
13. नेतरोऽनुपपत्तेः । (1–1–16)
14. भेद व्यपदेशाध्व।
15. रसो वै सः । यं लब्ध्वा आनन्दी भवति ... (तैति .... 1–7)
16. ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्। (यजु. 40–1
17. द्यूतैर्मा क्रीड कृषिमित् कृषस्व.... । (वेद)
18. प्रकृतिश्च प्रतिज्ञा हष्आन्तानुपरोधात् ।। अभिध्योपदेशात्।। आत्मकृतेः परिणामात्।। साक्षाच्चोभयाम्नानात् (वेदान्तदर्शन 1–4–13 से 16)
19. साक्षाच्चोभ्याम्नानात् (वेदान्त 1–4–25)
20. आत्मकृतेः परिणामात् ।। (वेदान्त 1–4–6)
21. मायां र्तु प्रकृति विंद्यात् मायाविनं महेश्वरम् ।। (श्वेता 4–10)